ब्रह्मा और सरस्वती-

(१) ब्रह्मा का पुत्री सरस्वती से सम्बन्ध-एक ब्राह्मण ग्रन्थ तथा पुराण में एक कथा है कि ब्रह्मा का अपनी पुत्री सरस्वती से अवैध सम्बन्ध था जिससे वे निन्दित हुए। किन्तु यह मनुष्य रूपी ब्रह्मा या सरस्वती के विषय में नहीं है, आकाश में सृष्टि के तत्त्वों का वर्णन है जो मूल उदाहरणों से स्पष्ट है। पण्डित मधुसूदन ओझा तथा उनके शिष्य पण्डित मोतीलाल शास्त्री ने ऐसी कथाओं को असद् आख्यान कहा है। जैसे ग्लोब दिखा कर या कागज पर वृत्त बनाकर पृथ्वी के बारे में समझाते हैं। पृथ्वी बहुत बड़ी है किन्तु आकार के विषय में अनुमान करने के लिए यह आवश्यक है। एक अन्य कारण है कि सृष्टि आकाश में हुई, किन्तु वस्तुओं का नाम करण पृथ्वी पर हुआ। भौतिक शब्दों के अर्थ का विस्तार ७ संस्थाओं में हुआ-आध्यात्मिक (शरीर के भीतर-योग, तन्त्र, आयुर्वेद), आधिदैविक (आधिज्योतिष, प्राण शक्ति), आधिभौतिक (पृथ्वी पर भौगोलिक, ऐतिहासिक, वैज्ञानिक, व्यावसायिक, औद्योगिक शब्द)। इनको ७ संस्था कहा गया है। अतः आकाश के तत्त्वों के वही नाम दिए गये, जो पृथ्वी की वस्तुओं के हैं। पृथ्वी पर गङ्गा नाम की नदियां हैं, पर आकाशगङ्गा ब्रह्माण्ड के भीतर एक चक्र है जो प्रायः १ मन्वन्तर में १ परिक्रमा करता है। दोनों को एक मानने से भ्रम होता है। मनुष्य रूप में सरस्वती किसी स्त्री का नाम हो सकता है, पर विद्या रूप सरस्वती सबके भीतर अव्यक्त है। आकाश की सरस्वती उनसे भिन्न है।

सर्वेषां तु स नामानि कर्माणि च पृथक् पृथक्। वेद शब्देभ्य एवादौ पृथक् संस्थाश्च निर्ममे॥(मनु स्मृति, १/२१)
ऋषयस्तपसा वेदानध्यैषन्त दिवा-निशम्। अनादि-निधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयम्भुवा॥
नाना रूपं च भूतानां कर्मणां च प्रवर्त्तनम् । वेद शब्देभ्य एवादौ निर्मिमीते स ईश्वरः॥
(महाभारत, शान्ति पर्व, २३२/२४-२६)
यास्सप्त संस्था या एवैतास्सप्त होत्राः प्राचीर्वषट् कुर्वन्ति ता एव ताः। (जैमिनीय ब्राह्मण उपनिषद् १/२१/४)
छन्दांसि वाऽअस्य सप्त धाम प्रियाणि । सप्त योनीरिति चितिरेतदाह । (शतपथ ब्राह्मण, ९/२/३/४४, वाज. यजु ,१७/७९)
अध्यात्ममधिभूतमधिदैवं च (तत्त्व समास, ७)
किं तद्ब्रह्म किमध्यात्मं किं कर्म पुरुषोत्तम। अधिभूतं च किं प्रोक्तमधिदैवं किमुच्यते॥१॥
अक्षरं ब्रह्म परमं स्वभावो ऽध्यात्म उच्यते। भूतभावोद्भवकरो विसर्गः कर्म संज्ञितः॥३॥
अधिभूतं क्षरो भावः पुरुषस्याधिदैवतम्। (गीता, अध्याय ८)

ज्ञान की उत्पत्ति द्रविड़ में हुई, किन्तु उसकी वृद्धि (अर्थ का विस्तार) कर्णाटक में हुई। श्रुति-ज्ञान कर्ण आदि ज्ञानेन्द्रियों से आता है, अतः उसकी वृद्धि का स्थान कर्णाटक हुआ। अप् या द्रव जैसे ज्ञान का उद्भव स्थान द्रविड हुआ।

अहं भक्तिरिति ख्याता इमौ मे तनयौ मतौ। ज्ञान वैराग्यनामानौ कालयोगेन जर्जरौ॥४५॥
उत्पन्ना द्रविडे साहं वृद्धिं कर्णाटके गता। क्वचित् क्वचित् महाराष्ट्रे गुर्जरे जीर्णतां गता॥४८॥
(पद्म पुराण उत्तर खण्ड श्रीमद् भागवत माहात्म्य, भक्ति-नारद समागम नाम प्रथमोऽध्यायः)

(२) ऐतरेय ब्राह्मण आख्यान-नीचे अनुवाद सहित मूल उद्धरण दिया है, जिससे स्पष्ट है कि यह आकाश के नक्षत्रों के विषय में है।

प्रजापतिर्वै स्वां दुहितरमभ्यध्यायत्-दिवमित्यन्ये आहुः, उषसमित्यन्ये। तामृश्यो भूत्वा रोहितं भूतामभ्यैत्। तं देवा अपश्यन्-अकृतं वै प्रजापतिः करोति, इति॥

ते तमैच्छन्-य एनमारिष्यति। एतमन्योऽन्यस्मिन्नविन्दन्। तेषां या एव घोरतमास्तन्व आसन्, ता एकधा समभरन्। ताः सम्भृता एष देवोऽभवत्, तदस्यैतद् भूतवन्नाम-इति॥

तं देवा अब्रुवन्-अयं वै प्रजापतिरकृतमकः, इम विध्येति। स तथेत्यब्रवीत्। स वै वो वरं वृणा इति, वृणीष्वेति। स एतमेव वरमवृणीत-पशूनामाधिपत्यम्। तदस्यैतत् पशुमन्नाम। इति॥ तमभ्यायत्याविध्यत्। स विद्ध ऊर्ध्व उदप्रपतत्। तमेतं मृग इत्याच्क्षते। य उ एव मृगव्याधः स उ एव सः। या रोहित्, सा रोहिणी। या उ एवेषुस्त्रिकाण्डा, सा एवेषुस्त्रिकाण्डा-इति॥
(ऐतरेय ब्राह्मण, १३/९)

= प्रजापति ने अपनी लड़की को (देखकर भार्या के रूप में सींचा। इसे कुछ ऋषि द्युलोक की देवता कहते हैं, और कुछ अन्य उषा देवता कहते हैं। वे प्रजापति हरिण होकर रोहित (हिरणी या ऋतुमती) हुई (दुहिता) के पास गये। उस (दुहितृगामी प्रजापति) को देवों ने देखा और परस्पर कहा-'ओह, प्रजापति अकृत-कर्म (निषिद्ध आचरण) करता है'-ऐसा विचार कर उन्होंने (ऐसे पुरुष को) खोजा जो इस (प्रजापति) को मारने में समर्थ हो। किन्तु अपने लोगों के बीच में किसी को भी नहीं प्राप्त किया। तब उनमें जो घोरतम (उग्र) शरीरांश था, उसे एक जगह एकत्र किया। वह सब एकीकृत हो कर यह देव (रुद्र) उत्पन्न हुए। इसीलिए उस (रुद्र) का भूत शब्द से युक्त (भूतपति) नाम हुआ।
उन (रुद्र) से देवों ने कहा-'इस प्रजापति ने अकृत-कर्म किया है, अतः इसे विद्ध करदो।' उन (रुद्र) ने वैसा ही किया। तब उन (रुद्र) ने कहा-मैं आप लोगों से एक वर का वरण करता हूँ। उन्होंने कहा-वरण कर। उन (रुद्र) ने यही वर मांगा कि मैं पशुओं का आधिपत्य प्राप्त करूँ। इसीलिए रुद्र का नाम पशु शब्द से युक्त (पशुपति) हुआ।
उस (प्रजापति) को (रुद्र ने बाण युक्त) धनुष को खींच कर मारा। विद्ध हुआ वह प्रजापति ऊपर को उछला। उस (आकाश में ऊपर उछले हुए प्रजापति) को अभिज्ञ जन (रोहिणी और आर्द्रा नक्षत्र के मध्य अवस्थित) मृगशिरा नक्षत्र कहते हैं। जिस (मृग-घाती रुद्र) ने उसको मारा, वह मृगव्याध हुआ। जो (दुहिता) लाल वर्ण की (हिरणी) थी, वही आकाश में रोहिणी हुई। (रुद्र का) जो बाण तीन धारों वाला था, वह तीन नोकों वाला भाग (इषु-त्रिकाण्डा) हो गया।

(३) शतपथ ब्राह्मण-यहां भी नक्षत्र सम्बन्धी ही चर्चा है। जब सूर्य रोहिणी, मृगशिरा नक्षत्रों में जाता है तब अग्नि का आधान (यज्ञ का आरम्भ) उपयुक्त है या नहीं, इस प्रसंग में ब्रह्मा-सरस्वती कथा का निर्देश है।
रोहिण्य़ामग्नी ऽआदधीत। रोहिण्यां ह वै प्रजापतिः प्रजाकामो ऽग्नीऽआदधे स प्रजा असृजत ता अस्य प्रजाः सृष्टा एकरूपा उपस्तब्धास्तस्थू रोहिण्य इवैव तद्वै रोहिणीत्वं बहुर्हैव पशुभिर्भवति- य एवं विद्वान् रोहिण्यामाधत्ते॥६॥
रोहिण्यामु ह वै पशवः। अग्नीऽआदधिरे मनुष्याणां कामं रोहेमेति। ते मनुष्याणां काममारोहन्। यमु हैव तत् पशवो मनुष्येषु काममारोहन्, तमु हैव पशुषु कामं रोहति-य एव विद्वान् रोहिण्यामाधत्ते॥७॥
मृगशीर्षेऽग्नी आदधीत। एतद्वै प्रजापतेः शिरो यन्मृगशीर्षम्। श्रीर्वै शिरः श्रीर्हि वै शिरस्तस्मात्-योऽर्द्धस्य श्रेष्ठो भवति, असावमुष्यार्द्धस्य शिर इत्याहुः। श्रियं ह गच्छति-य एवं विद्वान् मृगशीर्ष आधत्ते॥८॥
अथ यस्मात्-न मृगशीर्षं आदधीत। प्रजापतेर्वा एतच्छरीरं यत्र वा एनं तदविध्यँस्तदिषुणा त्रिकाण्डेनेत्याहुः। स एतच्छरीरमजहात्। वास्तु वै शरीरमयज्ञियं निर्वीर्यं। तस्मात्- न मृगशीर्ष आदधीत॥९॥
तद्वै दधीत। न वा एतस्य देवस्य वास्तु, नायज्ञियम्, न शरीरमस्ति, यत् प्रजापतेः। तस्मादैव दधीत। पुनर्वस्वोः पुनराधेयमादधीतेति॥१०॥
= रोहिणी नक्षत्र में भी अग्न्याधान करे। क्यों कि रोहिणी नक्षत्र में ही सन्तान के इच्छुक प्रजापति ने अग्न्याधान किया था, उससे प्रजा सृजी और वह प्रजा एक रूप और ठीक रही, रोहिणी (लाल गाय) के समान। इसलिए रोहिणी नक्षत्र रोहिणी गौ के समान है। इसलिए जो कोई इस रहस्य को समझ कर रोहिणी नक्षत्र में अग्न्याधान करता है, वह सन्तान और पशुओं से फूलता फलता है॥६॥
रोहिणी नक्षत्र में ही पशु अग्नियों का आधान करते हैं कि मनुष्यों की इच्छा तक चढ़ सकें (रोहेम)। उन्होंने मनुष्यों की कामनाओं तक रोहण किया। और जो कामना पशुओं की मनुष्यों के प्रति पूरी हुई, वही पशुओं के प्रति उसकी पूरी होगी। जो इस रहस्य को समझ कर रोहिणी नक्षत्र में अग्न्याधान करता है॥७॥
मृगशीर्ष नक्षत्र में भी अग्न्याधान हो सकता है। क्योंकि मृगशीर्ष प्रजापति का सिर है। श्री ही सिर है। श्री ही सिर है। इसलिए जो मनुष्य जाति में श्रेष्ठ होता है, उसे जाति का सिर कहते हैं। जो इस रहस्य को समझ कर मृगशीर्ष नक्षत्र में अग्न्याधान करता है, वह श्री को प्राप्त होगा॥८॥
अब मृगशीर्ष नक्षत्र में अग्न्याधान न करने की (युक्ति कुछ लोग यह देते हैं) कि यह प्रजापति का शरीर है। जब इसको देवों ने त्रिकाण्ड तीर से बीन्धा, तो कहते हैं कि उसने शरीर त्याग दिया। इसलिए यह शरीर केवल वास्तु, अयज्ञिय (यज्ञ न करने योग्य) और निर्वीर्य हो गया। इसलिए मृगशीर्ष में अग्न्याधान न करे॥९॥

परन्तु वह कर सकता है। यह जो प्रजापति का शरीर है, न तो वास्तु है, न अयज्ञिय, न निर्वीर्य। (इसलिए मृगशीर्ष में अग्न्याधान करे)। पुनर्वसु नक्षत्र में पुनराधेय कर्म करे। ऐसा आदेश है॥१०॥ (शतपथ ब्राह्मण, २/१/२/६-१०)

(४) मत्स्य पुराण-यहां भी सृष्टि के तत्त्व रूप में ही ब्रह्मा तथा उनकी पुत्री सरस्वती का वर्णन है। मनुष्य रूप ब्रह्मा के ४ या ५ सिर नहीं हो सकते हैं। मत्स्य पुराण, अध्याय ३-

एतत् तत्त्वात्मकं कृत्वा जगद्वेधा अजीजनत्॥२९॥
सावित्री लोकसृष्ट्यर्थं हृदि कृत्वा समास्थितः। ततः सञ्जपतस्तस्य भित्वा देहमकल्मषम्॥३०॥
स्त्रीरूपमधर्ममकरोदर्धं पुरुषरूपवत्। शतरूपा च सा ख्याता सावित्री च निगद्यते॥३१॥
सरस्वत्यथ गायत्री ब्रह्माणी च परन्तप। ततः स्वदेह सम्भूतामात्मजामित्यकल्पयत्॥३२॥
दृष्ट्वा तां व्यथितस्तावत् कामबाणार्दितो विभुः। अहो रूपमहो रूपमिति चाह प्रजापतिः॥३३॥
ततो वसिष्ठप्रमुखा भगिनीमिति चुक्रुशुः। ब्रह्मा न किञ्चिद्ददृशे तन्मुखालोकनादृते॥३४॥
अहो रूपमहो रूपमिति प्राह पुनः पुनः। ततः प्रणामनम्रां तां पुनरेवाभ्यलोकयत्॥३५॥
अथ प्रदक्षिणं चक्रे सा पितुर्वरवर्णिनी। पुत्रेभ्यो लज्जितस्यास्य तद्रूपालोकनेच्छया॥३६॥
आविर्भूतं ततो वक्त्रं दक्षिणं पाण्डुगण्डवत्। विस्मय स्फुरदोष्टं च पाश्चात्यमुदगात्ततः॥३७॥
चतुर्थमभवत् पश्चाद्वामं कामशरातुरम्। ततोऽन्यदभवत्तस्य कामातुरतया तथा॥३८॥
उत्पतन्त्यास्तदाकाश आलोकनकुतूहलात्। सृष्ट्यर्थं यत्कृतं तेन तपः परम दारुणम्॥३९॥
तत्सर्वं नाशमगमत् स्वसुतोपगमेच्छया। तेनोर्ध्वं वक्त्रमभवत् पञ्चमं तस्य धीमतः॥
आविर्भवज्जटाभिश्च तद् वक्त्रं चावृणोत् प्रभुः॥४०॥

= सांख्य के २६ तत्त्वों (विश्व पुरुष तथा व्यक्ति पुरुष अलग मान कर) से ब्रह्मा ने जगत् की रचना की। जब ब्रह्मा ने जगत् की सृष्टि करने की इच्छा से हृदय में सावित्री का ध्यान करके उपश्चरण प्रारम्भ किया, उस समय जप करते हुए उनका निष्पाप सरीर २ भागों में विभक्त हो गया। उसमें आधा स्त्री, आधा पुरुष रूप हो गया। परन्तप! वह स्त्री सरस्वती, शतरूपा नाम से विख्यात हुई। वही सावित्री, गायत्री और ब्रह्माणी भी कही जाती है। इस प्रकार ब्रह्मा ने अपने शरीर से उत्पन्न होने वाली सावित्री को अपनी पुत्री रूप में स्वीकार किया। कितु उस सावित्री को देखकर वे सर्वश्रेष्ठ प्रजापति ब्रह्मा मुग्ध हो उठे और कहने लगे-कैसा अद्भुत् रूप है, कैसा अद्भुत्? सावित्री के मुख को देखने के अतिरिक्त उनको अन्य कुछ नहीं दीख रहा था। बार बार कह रहे थे-अहो रूप, अहो रूप। जब सावित्री झुक कर प्रणाम करने लगी तब ब्रह्मा पुनः उनको देखने लगे। तब सावित्री ने उनकी प्रदक्षिणा की। उसे देखने के लिए ४ दिशाओं में ब्रह्मा के ४ मुख हो गये-दाहिने पीला मुख (पाण्डु), पीछे फड़कते ओठ वाला मुंह, वाम भाग में कामातुर दीखने वाला मुंह। सावित्री की ओर बार-बार देखने के कारण ब्रह्मा का सृष्टि रचना के लिए किया गया तप नष्ट हो गया तथा पाप के कारण ऊपर की तरफ जटा युक्त ५वां मुंह हुआ जिसे ब्रह्मा ने स्वीकार कर लिया।

(५) देवी भागवत पुराण-यहां सरस्वती को मूल प्रकृति का अंश कहा गया है जो ब्रह्मा को सृष्टि कार्य में सहायता के लिए प्रकृति ने दिया। देवी भागवत पुराण, अध्याय (३/६)-

गृहाणेमां विधे शक्तिं सुरूपां चारुहासिनीम्। महासरस्वतीं नाम्ना रजोगुणयुतां वराम्॥३२॥
श्वेताम्बरधरां दिव्यां दिव्यभूषणभूषिताम्। वरासन समारूढां क्रीडार्थं सहचारिणीम्॥३३॥
एषा सहचरी नित्यं भविष्यति वराङ्गना। मावमंस्था विभूतिं मे मत्वा पूज्यतमां प्रियाम्॥३४॥

= (आद्य प्रकृति ने अपने तथा ब्रह्म को एक ही कहा, जो सृष्टि के लिए भेद युक्त हो गया) अतः सृष्टि करने के लिए अपना स्वरूप महा सरस्वती को ब्रह्मा की सहचरी रूप में दिया।

(६) गरुड पुराण-यहां भी ये नाम सृष्टि तत्त्वों से सम्बन्धित हैं। यहां प्रद्युम्न का अर्थ भगवान् कृष्ण का पुत्र नहीं है, बल्कि पाञ्चरात्र दर्शन के अनुसार सृष्टि के ४ व्यूह या क्रम है-सूर्य सिद्धान्त (१२/१२-१७), नारदीय संहिता (१/३३-४७) । ४ व्यूह हैं-

वासुदेव (वास स्थान आकाश-अथर्व १०/१४/७-सर्वाधार)),

संकर्षण-परस्पर आकर्षण से पिण्ड बने-(अथर्व, १०/१४/८, ज्येष्ठ ब्रह्म सूक्त), आकृष्णेन रजसा वर्तमानः निवेशयन् अमृतं मर्त्यं च-(वाज.यजु, ३३/४३, ऋक्, १/३५/२)

प्रद्युम्न (तारा मण्डल से प्रकाश निकलना आरम्भ हुआ)-हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्, (वाज.यजु, ३३/४३, ऋक्, १/३५/२)

अनिरुद्ध (पृथ्वी पर अनन्त सृष्टि)-चित्राणि साकं दिवि रोचनानि (अथर्व, १९/७/१-नक्षत्र से भी सम्बन्धित), चित्रं देवानामुदगादनीकम् (ऋक्, १/१३५/१)

यहां पर विरिञ्चि तथा ब्रह्मा को अलग अलग कहा है, उनकी पत्नियों सावित्री तथा सरस्वती को भी भिन्न कहा है तथा उनको प्रद्युम्न की पुत्री कहा है। प्रद्युम्न सृष्टि का आरम्भ सूर्य तेज से हुआ। सूर्य का निर्माता ब्रह्माण्ड या चतुर्मुख ब्रह्म है, उसकी शक्ति सरस्वती है। सूर्य मण्डल के भीतर विरिञ्चि ब्रह्मा है जिसकी शक्ति सावित्री है। इनको अमृत तथा मर्त्य भी कहा है (वाज.यजु, ३३/४३, ऋक्, १/३५/२) या अकृतक-कृतक (विष्णु पुराण, २/७/१९-२०)।

गरुड़ पुराण, अध्याय (३/१६)-

कृतौ प्रद्युम्नतश्चैव समुत्पन्ने खगेश्वर। स्त्रियौ द्वे यमले चैव तयोर्मध्य तु यद्यिका॥८१॥
वाणीतिसंज्ञकां वीन्द्र ब्रह्माणी संज्ञकां विदुः। पुरुषाख्य विरिञ्चस्य भार्या सावित्रिका मता॥
चतुर्मुखस्य भार्या तु कीर्तिता स सरस्वती॥८२॥

= कृतयुग में प्रद्युम्न से २ यमल स्त्रियां उत्पन्न हुईं। उनके बीच में वाणी हुईं (या दोनों को वाणी कहते थे)। सावित्री का विवाह विरिञ्चि से तथा सरस्वती का चतुर्मुख ब्रह्मा से हुआ।

सरस्वती से मरुत्-

(७) वामन पुराण-ब्रह्माण्ड का क्षेत्र या आकाश सरस्वती है जिसके गर्भ में ७ x ७ मरुत् हैं। इसका खण्ड रूप दिति है जिसे इन्द्र के वज्र ने काट दिया। सूर्यों से निकला तेज ही इन्द्र का वज्र है, उसकी तीव्रता के अनुसार गति होती है जिनके अनुसार मरुत् विभाग हैं।

वामन पुराण, अध्याय ७१-विवेश मातुरुदरं नासारन्ध्रेण नारद॥२९॥
तेनैव गर्भं दितिजं वज्रेण शतपर्वणा। चिच्छेद सप्तधा ब्रह्मन् स रुरोद च विस्वरम्॥३४॥
शक्रोऽपि प्राह मा मूढ रुदस्येति सुघर्घरम्। इत्येवमुक्त्वा चैकैकं भूयश्चिच्छेद सप्तधा॥३६॥

= माता (दिति) के उदर में नासा रन्ध्र से इन्द्र प्रवेश कर गये। दिति के गर्ब के बालक को वज्र से ७ भाग में काट दिया। वह जोर से रोने लगा तो इन्द्र ने कहा कि मूर्ख मत रो। यह कह कर पुनः सभी को ७-७ भाग में काट दिया। मा-रुद कहने से वे मरुत् नाम से प्रसिद्ध हुए।

बाद में उनका सरस्वती के गर्भ से जन्म हुआ। वामन पुराण, अध्याय ७२-सरस्वतीभ्यः सप्तभ्यः सप्त वै मरुतोऽभवन्॥७५॥

(८) ऋग्वेद- यह वर्णन रहस्यात्मक है। इसके वैज्ञानिक शब्दों के प्रसंग अनुसार अलग अर्थ होंगे।

ऋक् (१०/६१)-ऋषि नाभानेदिष्ट मानव, छन्द-त्रिष्टुप्, देवता विश्वेदेवाः।

यहां ऋषि का नाम प्रायः वही तत्त्व होता है जिसका वे वर्णन कर रहे हैं। नाभा-नेदिष्ट का अर्थ है नाभि के निकट एकत्र करना। एकत्र होने पर यह रेत है, अतः रेत (बालू के कण जैसे) भी कहा गया है। रेत का अर्थ वीर्य भी है, जिसमें कण रूप शुक्राणु रहते हैं। ब्रह्माण्ड के लिए सूर्य, पृथ्वी भी कण हैं।

रेतो वै नाभानेदिष्टः (गोपथ ब्राह्मण, उत्तर, ६/८, ऐतरेय ब्राह्मण, ६/२७)

रेतो हि नाभानेदिष्टीयम् (ताण्ड्य महाब्राह्मण, २०/९/२)

प्राणो (नाभानेदिष्टयुक्तः-त्वष्टा) हि रेतसां विकर्त्ता (शतपथ ब्राह्मण, १३/३/८/१)

द्रप्सीव हि रेतः (शतपथ ब्राह्मण, ११/४/१/१५-द्रप्सः = drops, ठोस विदुओं सहित द्रव)

आण्डौ वै रेतः सिचौ, यस्य ह्याण्डौ भवतः स एव रेतः सिञ्चति (शतपथ ब्राह्मण, ७/४/२/२४)-मनुष्य के अण्डकोष से शुक्राणु बनते हैं, उसके बिना नपुंसक है।

आकाश में भी ऐसी ही सृष्टि होती है, ब्रह्म अपने ही द्वारा निर्मित प्रकृति (पुत्री) में बीज डालता है। गीता, अध्याय १४-

मम योनिर्महद् ब्रह्म, तस्मिन् गर्भं दधाम्यहम्। सम्भवः सर्व भूतानां ततो भवति भारत॥३॥
सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः सम्भवन्ति याः। तासां ब्रह्म महद् योनिरहं बीजप्रदः पिता॥४॥

यह प्रसारित पदार्थ से कण रूप पिण्डों का वर्णन है। इसके लिए गति की आवश्यकता है जिसे रुद्र तेज कहा गया है। विश्वेदेवा का अर्थ है सौर मण्डल के बाहर ब्रह्माण्ड के देव। फैले हुए सोम या विरल पदार्थ से पिण्ड बनने का क्रम लिखा है।

कृष्णा यद्गोष्वरुणीषु सीद्दिवो नपाताश्विना हुवे वाम्।
वीतं मे यज्ञमा गतं मे अन्नं ववन्वांसा नेषमस्मृतध्रू॥४॥

= हे स्वर्गपुत्र अश्विनीकुमारो! जिस समय काली रात लाल रंग वाली उषाओं में बदलने लगती है, उस समय तुम्हारा आह्वान करता हूँ। मेरे हव्य अन्न की अभिलाषा करने के ले तुम मेरे यज्ञ में आओ। अश्वों के समान उसे ग्रहण करो और मेरे प्रति द्रोह को भुला दो।

प्रथिष्ट यस्य वीरकर्ममिष्णदनुतिष्ठितं नु नर्यो अपौहत्।
पुनस्तदा वृहति यत्कनाया दुहितुरा अनुभृतमनर्वा॥५॥

= प्रजापति का वीर्य पुत्र उत्पन्न करने में श्रेष्ठ है। प्रजापति ने अपने लोकहितकारी वीर्य का त्याग किया, जिसे अपनी पुत्री उषा के शरीर में सिञ्चित किया।

मध्या यत्कर्त्वमभवदभीके कामं कृण्वाने पितरि युवत्याम्।
मनानग्रेतो जहतुर्वियन्ता सानौ निषिक्तं सुकृतस्य योनौ॥६॥

= जिस समय पिता ने अपनी युवती कन्या के साथ यथेच्छ कर्म किया, उस समय उनके संभोग कर्म के समीप थोड़ा वीर्य गिरा। परस्पर अभिगमन करते हुए उन दोनों ने वह वीर्य यज्ञ के ऊंचे स्थान योनि में छोड़ा था।

पिता यस्त्वां दुहितरमधिष्कन् क्ष्मया रेतः संजग्मानो नि षिञ्चत्।
स्वाध्योऽजनयन् ब्रह्म देवा वास्तोष्पतिं व्रतपा निरतक्षन्॥७॥

= जिस समय पिता ने युवती कन्या के साथ संभोग किया, उस समय पृथ्वी (आधार) से मिलकर वीर्य त्याग किया। शोभन कर्म वाले देवों ने उसी वीर्य से व्रतरक्षक देव वास्तोष्पति का निर्माण किया। (वास्तु = घर, जहां कोई कर्म या व्रत किया जा सके)।

(९) नक्षत्र सम्बन्धी अर्थ-नक्षत्र एक दूसरे से बहुत दूर हैं तथा कुछ अपने ब्रह्माण्ड के बाहर के ब्रह्माण्ड हैं जो पृथ्वी से एक साथ दीखते हैं, उनकी दिशा परस्पर निकट है। सूर्य सिद्धान्त, अध्याय ८ के अनुसार मृगशिरा नक्षत्र में ३ तारा हैं, जो प्रायः एक रेखा में हैं, किन्तु इसको मृग का शिर कहा जाता है। इसका उत्तरी तारा योगतारा है, जिसका स्थान लिखा जाता है। यह सूर्य सिद्धान्त के समय ६३ अंश पूर्व तथा १० अंश दक्षिण था। सूर्य सिद्धान्त (८/१०) में अगस्त्य का स्थान ८० अंश दक्षिण कहा है जो प्रायः ११,००० ईपू में था जिस के बाद जल प्रलय हुआ था।

आइजक असिमोव ने अपनी पुस्तक (Isaac Asimov-The Intelligent Man's Guide to Science, new edition 1963, last chapter) के अन्त में २ प्राचीन वर्णनों पर आश्चर्य व्यक्त किया है-महाभारत में ब्रह्मास्त्र के प्रयोग का वही प्रभाव कहा गया है जो परमाणु बम या हाइड्रोजन बम का होता है (अश्वत्थामा द्वारा ब्रह्मास्त्र प्रयोग के समय वेदव्यास द्वारा)। दूसरे मृगशिरा नक्षत्र की दिशा में एक प्राचीन तारा के विखण्डन का अवशेष है, जो विराट् बादल जैसा है। इससे प्रकाश नहीं निकलता है, पर इन्फ्रा-रेड (ताप) किरणों द्वारा इसका चित्र घोड़े के सिर जैसा दीखता है। इसे आजकल Horse-head Nebula (घोड़े के सिर जैसा मेघ) नाम दिया गया है। प्राचीन काल में यह कैसे ज्ञात हुआ था कि यह मृगशिरा या हरिण का सिर है?
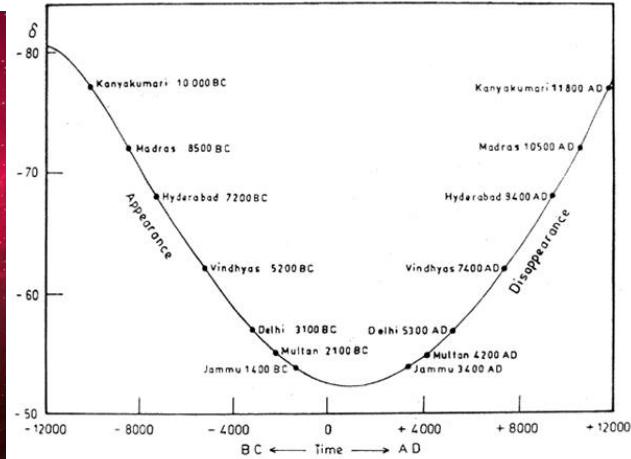
Figure 1. Visibility of Agastya (Canopus).

मृगशिरा से कुछ पहले (पश्चिम) २ तारा उत्तर में हैं-

ब्रह्महृदय-५२ अंश पूर्व, ३० अंश उत्तर (α-aurigae, Capella)

प्रजापति-५७ अंश पूर्व, ३८ अंश उत्तर (β-aurigae)

मृगशिरा के पूर्व मृगव्याध तारा (β-Tauri) दक्षिण में है। इसका स्थान ८० अंश पूर्व तथा ४० अंश दक्षिण है।

मुजफ्फर अली की पुस्तक पौराणिक भूगोल (S. Muzafar Ali-Geography of Purāṇas, page 182) में कहा है कि दक्षिण के सबसे बड़े द्वीप को भारत तथा अरब में भी हरिण द्वीप कहा जाता था, यद्यपि यहां हरिण नहीं थे। यह नाम दक्षिण दिशा के मृगव्याध नक्षत्र के अनुसार था। गर्ग संहिता (७/४०/३५) के अनुसार अपान्तरतमा ने यहां तप किया था, अतः गरुड़ वहां गये तो उनके पंख गिर गये। ब्रह्मवैवर्त पुराण (१/२२/१८) के अनुसार भी समुद्र पार (अपान्तरतम देश) में तप करने से उनका नाम अपान्तरतमा हुआ। महाभारत शान्ति पर्व (३४९/३९-६६) में अपान्तरतमा को वाणी-हिरण्यगर्भ का पुत्र कहा है। इनके अवतार रूप में पराशर पुत्र व्यास हुए।

मृगशिरा के पश्चिम रोहिणी नक्षत्र है, जिसका देवता प्रजापति है।

मृगव्याध को ग्रीस में भी ओरियन (पूर्वी) व्याध (Orion the hunter, Orient = East) कहते थे, अर्थात् भारतीय मत के अनुसार यह व्याध था।

मृगव्याध से मृग तथा प्रजापति की दिशा में ३ तारा प्रायः एक रेखा में दीखते हैं, जिसे वेद या ऐतरेय ब्राह्मण में इषु-त्रिकाण्डा कहा गया है।

(१०) शतपथ ब्राह्मण-यह अग्न्याधान के विषय में है। शतपथ ब्राह्मण के प्रथम ५ काण्डों में कई यज्ञों का वर्णन है-

१. अग्न्याधान, २. अग्निहोत्र, ३. दर्शपूर्णमासेष्टि, ४. पिण्ड पितृ यज्ञ, ५. चातुर्मास्येष्टि, ६ अयनयाग-पशुबन्ध, ७. अग्निष्टोम, ८. वाजपेय, ९. राजसूय, १०. अश्वमेध आदि।

व्यक्ति तथा समाज रूप में ये यज्ञ प्राकृतिक काल-चक्रों के अनुसार क्रिया का वर्णन करते हैं। राजसूय यज्ञ में प्रजा से राजा कर लेता है तथा पुनः उसका प्रजा के लिए प्रयोग करता है। वाजपेय यज्ञ समाज या देश की उन्नति, क्षमता वृद्धि के लिए है। अश्वमेध यज्ञ का अर्थ है देश में सञ्चार तथा यातायात अबाधित हो।

यज्ञ कास्थान वेदी है, उर्जा का स्थान अग्नि है, उसमें उत्पादन के लिए आहुति दी जाती है।

अग्न्याधान का अर्थ है, अग्नि जलाना। यह सदा जल सकती है जैसे स्टील प्लाण्ट की भट्टी सदा जलती रहती है। अग्नि का आरम्भ करना, या दूसरे से मांग कर लाना अन्य प्रकार हैं।

अग्निहोत्र दैनिक क्रिया हैं। पृथ्वी को अग्नि (आकाश का ठोस पिण्ड) कहा है, उसकी दैनिक अक्ष गति के अनुसार कर्म अनिहोत्र है।

पितर कई प्रकार के हैं-मनुष्य, ऋतु, वायुमण्डल, वृक्ष आदि। इनको पुष्ट करने से मनुष्य तथा समाज स्वस्थ रहता है।

अन्य यज्ञ वर्ष के विभिन्न भागों, चान्द्र मास, ऋतु, चातुर्मास, अयन आदि के अनुसार होते हैं। अयन यज्ञ को पशुबन्ध भी कहते हैं, यह भौतिक पशु नहीं, वर्ष का भाग है, जिनको भौतिक पशुओं का नाम दिया है।

कितनी प्रकार की अग्नि का आधान किया जाता है, इसके कुछ प्रकार छान्दोग्य उपनिषद् (५/४-१०) में है।

हवनकर्ता	अग्नि	समिध	धूम	ज्वाला	अङ्गार	विस्फुलिङ्ग	आहुति	उत्पत्ति
१. देव	द्युलोक	आदित्य	किरण	दिन	चन्द्रमा	नक्षत्र	श्रद्धा	सोमराजा
२. देव	पर्जन्य	वायु	बादल	विद्युत्	वज्र	गर्जन	राजा सोम	वर्षा
३. देव	पृथिवी	संवत्सर	आकाश	रात्रि	दिशा	अवान्तर दिशा	वर्षा	अज
४. देव	पुरुष	वाक्	प्राण	जिह्वा	चक्षु	श्रोत्र	अज	वीर्य
५. देव	स्त्री	उपस्थ	उपमन्त्रण	योनि	शुक्रनिवेश	आनन्द	रेत	गर्भ

इस पांचवी आहुति से पुरुष (स्त्री भी) दशम मास में उत्पन्न होता है।

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि आकाश, पृथ्वी पर या शरीर के भीतर जो कुछ निर्माण हो रहा है, वह यज्ञ से हो रहा है। इसके लिये उचित परिस्थिति को पर्जन्य कहा है, जो कृषि के लिए वर्षा है।

गीता, अध्याय ३ में कहा है कि आवश्यकता की चीजों का उत्पादन यज्ञ है। यज्ञ से पर्जन्य होता है तथा पर्जन्य से अन्न।यह केवल कृषि यज्ञ के लिए है। ज्ञान, स्वाध्याय, द्रव्य, प्राण आदि यज्ञों के लिए पर्जन्य का अर्थ वर्षा नहीं है। ज्ञान यज्ञ के लिए विद्यालय, पुस्तकालय आदि, प्राण यज्ञ के लिए घर में शान्त स्थान, द्रव्य यज्ञ के लिए कारखाना, दूकान आदि पर्जन्य हैं। जो भी दृश्य या अदृश्य उत्पादन हो वह अन्न है (Goods and services)।

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरो वाच प्रजापतिः। अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक्॥१०॥
अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्न सम्भवः। यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः ॥१४॥

सूर्य के नक्षत्रों के अनुसार अग्न्याधान का वर्णन ऋतु अनुसार है। इसके लिए सायन नक्षत्र होना चाहिए। स्थिर तारा के अनुसार अश्विनी प्रथम नक्षत्र है, किन्तु सायन स्थिति के अनुसार गणना के लिए कृत्तिका प्रथम नक्षत्र है अतः कहते हैं- कृत्तिकातः गणना।

सूर्य की स्थिति या ऋतु की गणना के लिये सदा उसी विन्दु से गणना करते हैं जब सूर्य विषुव पर लम्ब हो। इस विन्दु पर क्रान्ति वृत्त (पृथ्वी कक्षा) को विषुव वृत्त काटता है और वहां से गोलीय त्रिभुज बनता है जिसके गणित सूत्र हैं। यहां दोनों वृत्तों की रेखायें कैंची की तरह मिलती हैं, अतः इसे कृत्तिका (कैंची) कहते हैं। विपरीत दिशा में जहां दोनों शाखायें मिलती हैं, वह विशाखा नक्षत्र है। ये नाम स्थिर ताराओं के नक्षत्रों जैसे हैं किन्तु विषुव स्थान से हैं। इस पद्धति में कृत्तिका से गणनाहोती है, अतः कहा है-कृत्तिकातः गणना। किन्तु स्थिर ताराओं की गणना मेष से है। नक्षत्र स्थान के अनुसार सूर्य वर्ष से विषुव चक्र तक का वर्ष प्रायः २० मिनट छोटा होता है। स्थिर नक्षत्र तुलना में सूर्य वर्ष को निरयण (बिना अयन चलन का, Sidereal year)) तथा विषुव विन्दु पर सूर्य चक्र को सायन या ऋतु वर्ष (Tropical year) कहते हैं।

कृत्तिकाः प्रथमम्। विशाखे उत्तरम्। तानि देव नक्षत्राणि। अनुराधाः प्रथमम्। अपभरणीरुत्तमम्। तानि यमनक्षत्राणि। यानि देवनक्षत्राणि। तानि दक्षिणेन् परियन्ति। यानि यमनक्षत्राणि॥७॥ तान्युत्तरेण। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/२)

= कृत्तिका से विशाखा तक देव नक्षत्र हैं। अनुराधा से भरणी तक यम (दक्षिण) नक्षत्र हैं। जो देव नक्षत्र हैं, वे दक्षिण से जाते हैं। जो यम नक्षत्र हैं, वे उत्तर से।

यम दक्षिण का स्वामी है, देव उत्तर भाग में हैं। सूर्य देव नक्षत्रों में रहने पर विषुव के उत्तर भाग में रहता है, उसे दक्षिण में रख कर चलता है। यम नक्षत्रों में सूर्य विषुव से दक्षिण रहता है।
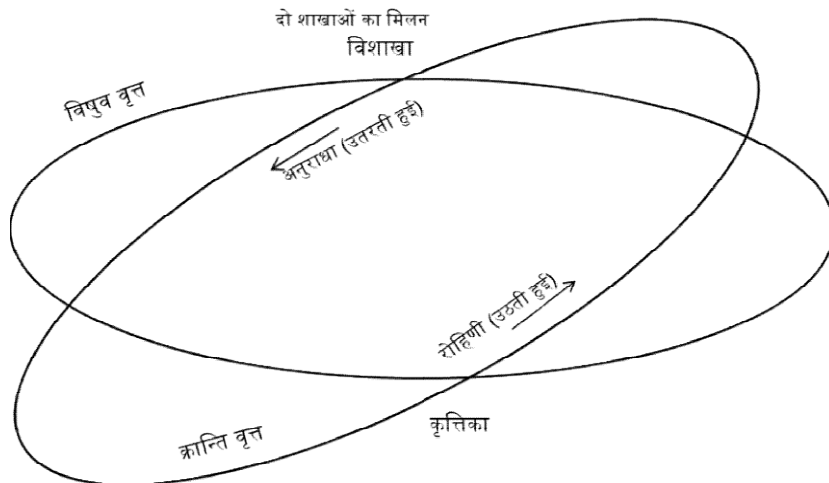
सतत ऊर्ध्वारोहत्। सा रोहिण्यभवत्। तद्रोहिण्यै रोहिणित्वम्। रोहिण्यामग्निमादधीत। स्व एवैनं योनौ प्रतिष्ठितमाधत्ते। ऋद्ध्नोत्येतेन॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/१/१०/६)

ऊरू विशाखे (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/२/३)-२ शाखाओं के मिलन को २ जंघा कहा है।

अन्वेषामरात्स्मेति। तदनूराधाः (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/२/८)

नक्षत्रों में सूर्य की स्थिति के अनुसार कृषि कार्य होता है-यह ऋतु वर्ष के अनुसार ही सम्भव है-

सूर्याया वहतुः प्रागात् सवितायमवासृजत्। अघासु हन्यन्ते गावोऽर्जुन्योः पर्युह्यते। (ऋक्, १०/८५/१३)

अथर्व में अघा को मघा तथा अर्जुनी को फल्गुनी लिखा है-

सूर्याया वहतुः प्रागात् सवितायमवासृजत्। मघासु हन्यन्ते गावः फल्गुनीषु व्युह्यते॥ (अथर्व सं. १४/१/१३)

= गावः का अर्थ किरण है। सूर्य मघा नक्षत्र में रहने पर ये कम होती हैं, अर्थात् शीत होता है (भारत के लिए उत्तर गोल में)। उसके बाद फल्गुनी नक्षत्र से तेज बढ़ना आरम्भ होता है। सूर्या का अर्थ सूर्य से उत्पन्न ऊर्जा क्षेत्र है, वह मघा से पहले आता है। सूर्य किरण से वर्षा मिलती है जो मघा से पहले हुआ।

इन्द्राग्नियोर्विशाखे। युगानि परस्तात् कृषमाणा अवस्तात्। मित्रस्यानूराधाः। अभ्यारोहत् परस्ताद् अभ्यारूढं अवस्तात्। इन्द्रस्य रोहिणी। -- निर्ऋत्यै मूलबर्हणी। (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१)

=इन्द्राग्नि के विशाखा में हल जोतते हैं और चलाते हैं। (इन्द्राग्नि -वर्षा और गर्मी दोनों)। अनुराधा में हल चलाना जारी रहता है। रोहिणी से इन्द्र आदि देव नक्षत्र हैं (कृत्तिका के बाद)। मूलबर्हणी से निर्ऋति (दक्षिण में) है।

सायन कृत्तिका से वर्ष आरम्भ होता है। वर्ष की अग्नि का आरम्भ होने से कृत्तिका का देवता अग्नि है। उसके बाद रोहिणी से सूर्य का तेज बढ़ता है तथा संवत्सर रूप प्रजापति का कार्य आरम्भ होता है, अतः रोहिणी का देवता प्रजापति है। मृगशिरा नक्षत्र का देव चन्द्र है, जब कृषि की तैयारी होती है।

(११) आधिदैविक अर्थ-सृष्टि के लिए ब्रह्मा द्वारा सरस्वती समागम का सरल स्पष्ट अर्थ यही है कि कोई भी यज्ञ ठीक से करने के लिए बुद्धि चाहिए। महाभारत, शान्ति पर्व, अध्याय ३४९-

मम त्वं नाभितो जातः प्रजा सर्गकरः प्रभुः। सृज प्रजास्त्वं विविधा ब्रह्मन् सजडपण्डिताः॥१९॥
स एवमुक्तो विमुखश्चिन्ताव्याकुल मानसः। प्रणम्य वरदं देवमुवाच हरिमीश्वरम्॥२०॥
का शक्तिर्मम देवेश प्रजाः स्रष्टुं नमोऽस्तु ते। अप्रज्ञावानहं देव विधत्स्व यदनन्तरम्॥२१॥
स एवमुक्तो भगवान् भूत्वाथान्तर्हितस्ततः। चिन्तयामास देवेशो बुद्धिं बुद्धिमतां वरः॥२२॥
स्वरूपिणी ततो बुद्धिरुपतस्थे हरिं प्रभुम्। योगेन चैनां निर्योगः स्वयं नियुजे तदा॥२३॥
स तामैश्वर्ययोगस्थां बुद्धिं गतिमतीं सतीम्। उवाच वचनं देवो बुद्धिं वै प्रभुरव्ययः॥२४॥
ब्रह्माणं प्रविशस्वेति लोकसृष्ट्यर्थसिद्धये। ततस्तमीश्वरादिष्टा बुद्धिः क्षिप्रं विवेश सा॥२५॥

= विष्णु के नाभि कमल से ब्रह्मा उत्पन्न होने पर विष्णु ने उनसे सृष्टि करने को कहा तो ब्रह्मा ने कहा कि इसके लिए उनके पास बुद्धि नहीं है। तब विष्णु बुद्धि का आवाहन कर उसे तेजयुक्त कियातथा ब्रह्मा के भीतर प्रवेश करने की आज्ञा दी।

ईश्वर रूप ही शिव है, उसका तीव्र तेज रुद्र है।

आधिदैविक अर्थ समझने के लिए कई परिभाषायें जानना जरूरी है।

ब्रह्म का अर्थ है परमतत्त्व जिससे सृष्टि का आरम्भ, वृद्धि, क्षय, लय आदि हुआ-

जन्माद्यस्य यतः (ब्रह्मसूत्र, १/१/२), यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते। येन जातानि जीवन्ति। यत्प्रयन्त्यभि संविशन्ति। तद्विजिज्ञासस्व तद्ब्रह्मेति। (तैत्तिरीय उपनिषद्, ३/१/१)

अव्यक्त ब्रह्म का स्रष्टा रूप ब्रह्मा, क्रिया या यज्ञ रूप विष्णु तथा ज्ञान रूप शिव है। यह गायत्री मन्त्र के ३ पाद हैं।

देवी रूप में गायत्री मन्त्र के ३ पाद महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती हैं।

पुरुष-स्त्री-अव्यक्त ब्रह्म एक ही है, जो पुरुष कहा जाता है। यह चेतन तत्त्व है। व्यक्ति रूप में भी चेतन तत्त्व पुरुष है। सृष्टि के लिए पुरुष ने अपने को २ भागों में विभक्त किया, जिनको पुरुष तथा स्त्री (श्री, प्रकृति) कहते हैं।

देवों में पुरुष स्त्री विभाजन को वृषा-योषा, अग्नि-सोम, मनु-शतरूपा आदि कहते हैं।

वृषा वर्षा करता है, योषा ग्रहण करती है।

अग्नि का सामान्य अर्थ आग है, जो ताप का घना रूप है। किसी पिण्ड का भी घना रूप अग्नि है, जैसे पृथिवी। फैला हुआ विरल पदार्थ सोम है। यह जल जैसा होने से इसे जल के विभिन्न नामों से भी कहा गया है।

मनुष्य जन्म के लिए पुरुष केवल बीज देता है, जनन क्रिया स्त्री के गर्भ में ही होती है, जो क्षेत्र है। इसी अर्थ का विस्तार आकाश के देव रूपों में हुआ है।

सांख्य परिभाषा के अनुसार चेतन तत्त्व पुरुष है, निर्माण सामग्री या पदार्थ प्रकृति है। यह मातृ होने से पदार्थ को मैटर (matter) कहा गया है।

मनु मन तत्त्व है जो चेतन है। ब्रह्मा के ही अर्ध भाग से स्त्री उत्पन्न हुई जिसे गायत्री, शतरूपा आदि कहा जाता है (मत्स्य पुराण, ४/२४, शिव पुराण, ७/१/१७)

द्विधा कृत्वाऽऽत्मनो देहमर्धेन पुरुषोऽभवत्। अर्धेन नारी तस्यां स विराजमसृजत् प्रभुः॥ (मनुस्मृति, १/३२)

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनोबुद्धिरेव च। अहङ्कार इतीयं मे भिन्न प्रकृतिरष्टधा॥ (गीता, ७/४)

मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम्। (गीता. ९/१०)

विद्या भी २ प्रकार की है-कणों का संग्रह गिना जा सकता है, विद्या का वह रूप गणेश है।

जो गिना नहीं जा सकता है, क्षेत्र में फैला हुआ है वह रसवती या सरस्वती है।

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि। मङ्गलानां च कर्तारौ वन्दे वाणी विनायकौ॥

(रामचरितमानस, मङ्गलाचरण)

वर्ण, शब्द आदि गिने जा सकते हैं, वह गणेश है, अर्थ भाव गिने नहीं जा सकते, वह सरस्वती है।

विद्या सम्बन्धी सभी शब्द स्त्रीलिंग हैं-स्मृति, धी, बुद्धि, मेधा, धिषणा, विद्या।

कहा भी है-या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता (दुर्गा सप्तशती, ५/२०)

एक विचार कण रूप है, वह पुल्लिंग है। उसका संघ स्थान मन उभयलिंग है।

विचारों का संग्रह, उनका वर्गीकरण, प्रयोग आदि मिला-जुला है, अतः बुद्धि, विद्या, मेधा आदि स्त्रीलिंग हैं।

सैनिक पुल्लिंग है, पर उनका समन्वय सेना या वाहिनी स्त्रीलिंग है। केश पुल्लिंग है पर उनका समूह मूंछ या चोटी स्त्रीलिंग है।

आकाश में सृष्टि के ५ पर्व हैं-
स ऐक्षत प्रजापतिः (स्वयम्भूः) इमं वा आत्मनः प्रतिमामसृक्षि। आत्मनो ह्येतं प्रतिमामसृजत। ता वा एताः प्रजापतेरधि देवता असृज्यन्त-(१) अग्निः (तद् गर्भितो भूपिण्डश्च), (२) इन्द्रः (तद् गर्भितः सूर्यश्च), सोमः (तद् गर्भितः चन्द्रश्च), (४) परमेष्ठी प्राजापत्यः (स्वायम्भुवः)-शतपथ ब्राह्मण (११/६/१/१२-१३)

स्वयम्भू -शतपथ ब्राह्मण (६/१/१/८), परमेष्ठी-वारि वा अप् रूप-शतपथ ब्राह्मण (६/१/१/९-१०), सूर्य त्रयी विद्या (श्रुतेः त्रीणि पदाः)-शतपथ ब्राह्मण (११/६/१/१), भूमण्डल भूपिण्डः-शतपथ ब्राह्मण (६/१/२/१), भूक्षेत्र-शतपथ ब्राह्मण (६/१/२/३), चन्द्र मण्डल-शतपथ ब्राह्मण (६/१/२/४)

(१) स्वयम्भू मण्डल अनन्त है तथा दृश्य भाग में १०० अरब ब्रह्माण्ड हैं। इसका मूल तत्त्व सर्वतः समान थ अतः उसे रस कहा गया है। इसमें तरंग होने से वह सरिर या सलिल हुआ। इसमें पिण्डों या कणों का सम्पर्क सूत्र वेद है तथा क्रिया रूप नियति है जो प्रकृति का मूल रूप है।

(२) परमेष्ठी मण्डल हमारा ब्रह्माण्ड है, जिसमें जल रूप तत्त्व अप् है। इसमें कम्पन या शब्दहोने से यह अम्भ हुआ। इसका क्षेत्र सरस्वती है। बीच में थाली जैसा घूमता हुआ क्षेत्र आकाशगंगा है। इसका केन्द्र अमृत कृष्ण है (ब्रह्माण्ड का मूल जो मूल नक्षत्र की दिशा में है)।

योषा वै सरस्वती, पूषा वृषा (शतपथ ब्राह्मण, २/५/१/११)

पूषन्नेकर्षे यम सूर्य प्राजापत्य व्यूहरश्मीन् समूह (ईशावास्योपनिषद्, वाज. यजु, ४०/१६)

(३) सौर मण्डल का क्षेत्र सावित्री है क्योंकि इसी से हमारा जन्म हुआ है (सव या प्रसव = जन्म होना)। इसका जल मर है जिसमें सूर्य किरण मरीचि से सृष्टि होती है। सूर्य ब्रह्माण्ड के कण रूप में अमृत ब्रह्माण्ड या उसके चेतन् रूप ब्रह्म का अंश है। अपने मण्डल के केद्र रूप में वह मर्त्य लोक का स्वामी है जिसका चेतन तत्त्व मर्त्य ब्रह्मा या विरिञ्च है।
आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च।

हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्॥ (ऋक्, १/३५/२, वाज. यजु, ३/४३, ३४/३१)

येन सूर्या सावित्रीम् (अथर्व, ६/८२/८)

मूलमेषामवृक्षामेति। तन्मूलबर्हणी (तैत्तिरीय ब्राह्मण, १/५/१/४, ३/१/२/३)

(४) चान्द्र मण्डल-वह गोल है जिसके भीतर चन्द्र कक्षा है। यह अत्रि है जिसमें नेत्ररूपी सूर्य से तेज तथा आकाशगंगा का द्रव रूप अम्भ मिल कर सम-शीतोष्ण भाग में सृष्टि कर रहे हैं। इसका स्वयं का प्रकाश नहीं होने से यह ब्रह्मा कृष्ण है।

चन्द्रमा वै ब्रह्मा कृष्णः (वाज. यजु, २३/१३, शतपथ ब्राह्मण, १३/२/७/७)

स यदस्यै पृथिव्या अनामृतं देवयजनमासीत्तच्चन्द्रमसि न्यदधत तदेतच्चन्द्रमसि कृष्णम् (शतपथ ब्राह्मण, १/२/५/१८)
अथ नयन समुत्थं ज्योतिरत्रेरिवद्यौः सुरसरिदिव तेजो वह्निनिष्ठ्यूतमैशम्।
नरपतिकुलभूत्यै गर्भमाधत्त राज्ञी गुरुभिरभिनिविष्टं लोकपालानुभावैः॥ (रघुवंश २/७५)
= जैसे चन्द्र मण्डल में सूर्य तेज तथा आकाशगंगा द्रव से मिल कर सृष्टि होती है वैसे ही पुरुष का बीज स्त्री गर्भ में रज के साथ मिलने पर मनुष्य का जन्म होता है।
सोमो वैष्णवो राजेत्याह तस्याप्सरसो विशस्ता इमा आसत इति युवतयः शोभना उपसमेता भवन्ति ता उपदिशत्यङ्गिरसो वेदः सोऽयमिति (शतपथ ब्राह्मण, १३/४/३/८, वाज यजु, १८/३८-४३)

यहां चन्द्र मण्डल के सोम का निर्माता तत्त्व अप्सरा कहा गया है, जो युवती जैसी हैं (७२ हूर नहीं हैं)

(५) भूमण्डल-पृथ्वी पर मनुष्य रूप ७ ब्रह्मा हुए जिनका वर्णन महाभारत, शान्ति पर्व, अध्याय ४९-३४९ में है। उनको सृष्टि के लिए बुद्धि रूपी सरस्वती विष्णु ने दी।